शिक्षा में विषमता

❑ राजाराम भादू

भारतीय समाज की विषमता विकास और प्रगति की वास्तविक चिंता का केन्द्र होनी चाहिए, यह भले ही सभी बौद्धिकों की मान्यता नहीं हो लेकिन अधिकांश की इससे प्रकटत: सहमति तो है ही । यह विषमता एक बड़ी भारी चुनौती है क्योंकि इसकी संरचना खासी जटिल है और यह बहुआयामी तथा विविधस्तरीय है । दूसरे, विषमता की काट अर्थात विकल्प भी उतना आसान नहीं है । इस संदर्भ में, संयुक्त राष्ट्र संघ की कल्याणकारी संस्थाओं द्वारा सुझाये गये उपाय भी, खासकर भारत के संदर्भ में बहुत संतोषप्रद प्रतीत नहीं होते । वस्तुत: विषमता अर्थशास्त्रीय 'कलासिकी' मापकों के इतर देशज जटिलताएं भी लिए होती है जो उसे और दुर्लंध्य बनाती है । यहां हम देश की शैक्षिक विषमता पर विचार करना चाहेंगे ।

भारत में शिक्षा-परिदृश्य की विषमता चकित करने वाली है और ऐतिहासिक क्रम में भी हम इसे बहुत अधिक परिवर्तित होता हुआ नहीं पाते । मसलन आजादी से पहले भी देश में अनेक ऐसे परिवार थे जिनके बच्चे इंग्लैंड के महंगे स्कूलों में शिक्षा प्राप्त करते थे । दूसरी ओर, देश के सुदूर अंचलों में लाखों बच्चे शिक्षा का स्वप्न देख सकने की स्थिति में भी नहीं थे । आज जब दुनिया के देशों में निकटता और परस्पर आवाजाही बढ़ी है तो भारत का धनाड्य वर्ग पश्चिम के पसंदीदा मुल्क में अपने बच्चों को शिक्षा दिलाता है । जबकि हम चिंतित रहते हैं कि देश के हर बच्चे को स्कूल की परिधि में लाने के लिए क्या उपक्रम करें ।

जैसा कि हमने शुरू में कहा, भारत में शिक्षा की विषमता को आंकने के लिए संदर्भित अन्तर्राष्ट्रीय मापक लागू हो सकते हैं, लेकिन इन मापकों के साथ देशज संदर्भ जुड़े हुए हैं । ये विशेष संदर्भ हैं, समाज की जाति आधारित संरचना, स्त्रियों की उपेक्षित स्थिति और निर्धनतम असंगठित क्षेत्र । ये तो कुछ ऐसी विशेषताएं हैं जिन्हें देशव्यापी कहा जा सकता है। इनके अतिरिक्त स्थानीय स्तर पर कुछ और स्थितियां भी शैक्षिक संदर्भों से जुड़ी हो सकती हैं, बल्कि होंगी ही । यहां धार्मिक शाखा-प्रशाखाओं की मान्यताएं और विभिन्न समुदायों के रीति-रिवाजों का उल्लेख किया जा सकता है ।

प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में बड़े पैमाने पर विषमता के तीन स्तर तो स्वयं राज्य द्वारा स्वीकृत हैं । इनमें एक स्तर केन्द्रीय विद्यालय, सैनिक स्कूलों और नवोदय विद्यालयों वगैरह का है । दूसरा स्तर राज्य सरकारों द्वारा संचालित विद्यालय प्रणाली है और तीसरा अनौपचारिक शिक्षा क्षेत्र है। निश्चय ही इन तीन स्तरों में भी आंतरिक स्तरभेद हैं । नवोदय विद्यालय केन्द्रीय विद्यालयों से होड़ नहीं ले सकते। राज्यों द्वारा संचालित ग्रामीण और शहरी स्कूलों में ही खासी गुणात्मक भिन्नता है, उदाहरणार्थ जहां शहरी स्कूलों में शिक्षक 'सरप्लस' हैं, वहीं गांव का स्कूल 'शिक्षक विहीन' है । यही हाल अनौपचारिक शिक्षा क्षेत्र का है, जहां हजारों अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र कागजों पर चल रहे हैं । निजी क्षेत्र में विषमता के अनेक संस्तर हैं जिसमें एक ओर इंग्लैड या अमेरिकी पब्लिक स्कूलों से होड़ लेते पब्लिक स्कूल हैं तो दूसरी ओर शिक्षा की 'दरिद्र दुकानें' हैं । सरकारी और निजी क्षेत्र के समान्तर धार्मिक संस्थाओं और स्वैच्छिक संगठनों द्वारा चलाये जाने वाले विद्यालय एवं नवाचार हैं ।

इस विषमता की खाई को कुछ पाटने या कहें कि इससे सुसंगत रूप से निपटने के लिए यही रणनीति हो सकती थी कि सबसे निचले पायदान को मजबूत किया जाये और इसके लिए प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण किया जाये और शिक्षा की न्यूनतम गुणवत्ता सुनिश्चित की जाये । बेशक, इस दिशा में

राष्ट्रव्यापी चिंतन-मनन और पहल होती भी दिखायी देती है । लेकिन जहां तक विषमता को कम करने का सवाल है, इस रणनीति के समक्ष भी चुनौती आसान नहीं है, खासकर तब जबकि अन्तराष्ट्रीय अनुसंधान संस्थाओं के आंकड़ें यह कह रहे हों कि भारत में बाल-मजदूरों की तादाद दुनियां में सबसे ज्यादा है । और स्कूल न जाने वाले बालक-बालिकाओं की संख्या के लिहाज से भी देश काफी आगे है।

शैक्षिक विषमता की जटिलताओं के कुछ पहलुओं की उक्त रणनीति में प्रत्यक्ष या परोक्ष अनदेखी की गयी है । भारत में शिक्षा का सबसे प्रभावी रूप अच्छी आजीविका सुलभ कराने में मददगार का रहा है । ब्रिटिश काल से ही बना शिक्षा के प्रति यह आकर्षण बाद में और प्रबल होता गया । इस दीर्घकाल में शिक्षा, विशेषकर उच्च शिक्षा, नौकरी पाने की गारंटी बन गयी । आरक्षण-व्यवस्था के चलते समाज के दलित तबकों में भी यह आकर्षण उत्पन्न हुआ । लेकिन यह स्थिति अब बदल गयी है । लोगों को यह मालूम हो गया है कि साधारण किस्म की शिक्षा अब नौकरी पाने की गारंटी नहीं हो सकती । वैश्वीकरण ने अंग्रेजी के प्रचलन को और बढ़ावा दिया है, नयी बाजार-व्यवस्था ने व्यवसाय के परंपरागत तौर-तरीके बदल दिए हैं । यहां तक कि प्रबंध पाठ्यक्रम और कम्प्यूटर के सामने अब तक प्रतिष्ठित समझे जाने वाले मेडिकल और इंजीनियरिंग पाठ्यक्रम फीके पड़ गये हैं । विश्वविद्यालय और अनेक व्यावसायिक प्रतिष्ठान गंभीर संकट से गुजर रहे हैं । इस सबकी छाया पूरे शिक्षा- परिदृश्य पर पड़ी है । उच्च शिक्षा के प्रति समाज के इस मोहभंग ने प्राथमिक शिक्षा के प्रति रुझान को भी प्रभावित किया है । दूसरी ओर प्राथमिक शिक्षा की 'न्यूनतम गुणवत्ता' ने इसे साक्षरता में 'रिड्यूस' कर दिया है । शिक्षा की गुणवत्ता की दिशा में नवाचारों की उपलब्धियों से 'सार्वजनीकरण कार्यक्रमों' ने लाभ नहीं उठाया है ।

देश के मध्यम तबके का एक बड़ा भाग शिक्षा के निजी क्षेत्र की ओर उन्मुख हुआ है । इसके कारण सर्वविदित हैं - सरकारी स्कूलों का गिरता स्तर और निजी स्कूलों का अंग्रेजी शिक्षण । इसकी एक सहज परिणति यह है कि सरकारी स्कूलों में प्राथमिक स्तर से अंग्रेजी शिक्षण की मांग उठने लगी है और कई राज्य सरकारों ने तो अंग्रेजी शिक्षण को पहली कक्षा से लागू भी कर दिया है । तब 'सार्वजनीकरण' के अन्तर्गत 'शिक्षा के न्यूनतम स्तर' में भी क्या अंग्रेजी शिक्षण को सम्मलित किया जाना चाहिए ? अन्यथा क्या वह विषमता का एक और पहलू नहीं होगा ?

आखिर में, शैक्षिक विषमता के इससे भी एक बड़े पहलू के जिक्र से अपनी बात समाप्त करेंगे । सूचना-विस्फोट और कम्प्यूटर-तकनीक ने समस्त शैक्षिक क्षेत्र को दो फाड़ कर दिया है । इसे यूं कह सकते हैं कि एक ओर तो कंप्यूटर से काम ले सकने वाले यानी 'कंप्यूटर-साक्षर' लोग हैं जो ज्ञान और सूचना की वैश्विक संचरण-प्रक्रिया से जुड़े हैं, (जाहिर है कि अभी तक तो इस सम्प्रेषण का माध्यम अंग्रेजी ही है तथा आगे भी उम्मीद है कि उसका वर्चस्व कायम रहेगा); दूसरी ओर इस संचरण से असम्बद्ध अथवा इस संप्रेषण-प्रक्रिया से बाहर रह गये लोग हैं जो कि अपनी तादाद में बहुसंख्यक हैं। इन बहुसंख्यकों में इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि वे शिक्षित हैं अथवा नहीं क्योंकि कंप्यूटर के समक्ष तो वे 'अ-साक्षर' ही हैं । और भी, ग्रामीण क्षेत्र और शहरी गरीबों के संदर्भ में तो कम्प्यूटर-शिक्षण की कल्पना करना भी मुश्किल है जहां कक्षाएं पेड़ के नीचे लग रही हैं और शिक्षक खुद इस तकनीक से अपरिचित हैं । ध्यान रहे कि बात छह से चौदह साल के बच्चों के संदर्भ में है और यह माना जाता रहा है कि इनमें से लगभग आधे बच्चे आगे की पढ़ाई नहीं कर पाते हैं ।

इस प्रसंग में, शैक्षिक विषमता की यह नयी परिघटना एक नयी चुनौती खड़ी करती है । क्या शिक्षा के सार्वजनीकरण कार्यक्रम के 'अधिगम' में हम अंग्रेजी और कंप्यूटर-शिक्षण को शामिल करने जा रहे हैं । यदि नहीं तो क्या शैक्षिक विषमता और शिक्षाकी अवधारणा पर ही हमारा पुनर्विचार करने का इरादा है ?◆